पाँचवाँ अध्याय

भाषा एवं शैली

भाषा एवं शैली

भाषा , विचारों की अभिव्यक्ति का साधन है| मनुष्य जाति के आज तक का विकास भाषा के कारण ही संभव हुआ है| भाषा नहीं होती तो मनुष्य तथा पशु में कोई अन्तर नहीं होता| साहित्य, भाषा पर आधारित सृजनात्मक व्यापार का परिणाम है| साहित्य का अध्ययन वास्तव में भाषा एवं शैली का अध्ययन है| भाषा और साहित्य का अटूट संबंध है| सफल तथा सशक्त भाषा के अभाव में साहित्य अधूरा रह जायेगा| भाषा-लालित्य तथा गरिमा से साहित्य उच्च कोटि का बनेगा और ऐसा साहित्य ही कालजयी बनेगा जिसमें भाषा का उचित प्रयोग हो|

इस दृष्टि से देखें तो आचार्य हज़ारी प्रसाद द्विवेदी की रचनाएँ निश्चय ही श्रेष्ठ है| द्विवेदी की भाषा किसी युग विशेष के ढाँचे में नहीं बँधती| उसका स्वरूप प्रत्येक विधा की प्रत्येक रचना में बदला हुआ मिलता है| उनकी भाषा को, भाषा की अपनी प्रकृतिमात्र से परिभाषित नहीं किया जा सकता| द्विवेदी की रचनाओं को मुख्यतः उपन्यास, निबंध और आलोचना में बाँटा जा सकता है| औपन्यासिक कथावस्तु के कलेवर बुनने का आधार ऐतिहासिक और प्रागैतिहासिक है, जिसे सांस्कृतिक कहा जाना अधिक उचित है| इन उपन्यासों में अतीत के गर्भ में प्रविष्ट होकर, कुछ सत्यों का साक्षात्कार किया गया है| उनमें नई चमक तथा उमंग डालकर, वर्तमान परिवेश में जोड़ा गया है और प्रासंगिकता दी गई है| इसलिए उपन्यासों में प्रयुक्त द्विवेदी की भाषा को भाषा वैज्ञानिक भोलानाथ तिवारी ने 'पुनर्निर्माण का सौंदर्यशास्त्र' कहा है|[1] निबंधों में उनकी भाषा बिलकुल अलग है| निबंधों का सृजन विभिन्न विषयों को लेकर हुआ है| इसलिए उन्होंने इसकी भाषा में भी विविधता लाने का प्रयास किया है| उनकी समीक्षा साहित्य दार्शनिकता के धरातल पर विचरण करनेवाला है|

[1] हज़ारी प्रसाद द्विवेदी, भोलानाथ तिवारी, पृ : 121

इस लिए ही इसमें उसकी भाषा संस्कृत से जुड़ा हुआ है| द्विवेदी के अनुसार मनुष्य के उत्थान को दृष्टि में रखकर बोली व लिखी जानेवाली भाषा ही सहज भाषा है|

उपन्यासों की भाषा

'बाण भट्ट की आत्मकथा' की भाषा विशुद्ध संस्कृत निष्ठ है| संस्कृत के साथ ही साथ द्विवेदी ने हिंदी शब्दों को भी संस्कृत करके प्रयोग किया है| क्रिया में शब्दों का अंग-भंग कहीं नहीं हुआ है| इसकी भाषा की महत्वूर्ण विशेषता यह है कि उसका स्वर कई स्थानों पर व्यक्तिपरक है और मनोवैज्ञानिक है| व्यंग्यात्मक स्थानों पर भाषा हास्यमय होने के कारण शैली में विशेष आकर्षण आ गया है| चंडीमण्डप का पूजारी इस संदर्भ में विशेष उल्लेखनीय है| आत्मकथा का लेखक एक सशक्त निबंधकार है, अतः भाषा की सजावट और उचित शब्दों का, उचित स्थान पर प्रयोग करना लेखक का संस्कार बन चूका है|

'चारुचन्द्रलेख' में भी संस्कृत निष्ठ भाषा का प्रयोग हुआ है| उपन्यास में भावुकता लाने के लिए संस्कृत, अपभ्रंश, अरबी-फारसी आदि भाषाओँ के शब्द के साथ ही साथ कल्पना का सौन्दर्यग्राही वितान भी इसमें हुआ है|

'पुनर्नवा' में लेखक ने चौथी शताब्दी की कहानी 20वीं शताब्दी के मानव के लिए लिखी गयी हैं| उस समय संस्कृत, शिक्षित जनों की भाषा थी| जन-सामान्य में प्राकृत या देशज का ही प्रयोग हुआ करता था| 'पुनर्नवा' में दोनों रूपों को स्पष्टतः दिखाई देता है| ऐतिहासिक तथा सांस्कृतिक वातावरण उपस्थित करने की दृष्टि से काव्यमय, अलंकृत तथा संस्कृतनिष्ठ शब्दावली का प्रयोग किया गया है| साधारण पात्रों की भाषा में भी शिक्षित पात्रों की शब्दावली का प्रयोग खटकने लगता है| उपन्यास में सुमेरु काका भी देवरात के समान बोलता है और माढव्य शर्मा तथा चंद्रमौली भी समान शब्दावलियों का प्रयोग करते हैं| दो-दो, तीन-तीन शब्दों के

छोटे वाक्यों को लेकर, चार पंक्तियों तक के दुरूह वाक्यों की संरचना उपन्यास में देखी जा सकती है|

'अनामदास का पोथा' की भाषा भी इसी प्रकार काव्यमय है| इसमें भाषा के दो रूप मिलते है :- (1) वैदिक-वेदांती शब्दों की अप्रचलित श्रृंखला (2) शुद्ध आँचलिक प्रयोग| मुहावरेदार भाषा का प्रयोग भी इसमें हुआ है| क्रियात्मक संरचनाएँ प्रस्तुत उपन्यास में अधिक दिखाई देता है| जाबाला की आँखे, कान तक फ़ैल गई (वह मानो आँख और कान दोनों से मिलाकर सुनना चाहती हो) इसी प्रकार का भाषा प्रयोग द्विवेदी ने इसमें किया है|

निबन्धों की भाषा

द्विवेदी के निबंधों की भाषा नितांत, निजी एवं सहज है| आपके निबंधों में विषय की विविधता है| यह संस्कृति, इतिहास, ज्योतिष, मनोविज्ञान, भाषाशास्त्र, दर्शनशास्त्र, नृशास्त्र, नीतिशास्त्र और साहित्यशास्त्र पर आधारित हैं| संस्कृत, पाली, प्राकृत, अपभ्रंश, बंगला, हिंदी, अंग्रेज़ी आदि भाषाओं का गहन गंभीर अध्ययन उनके निबंधों में विद्यमान है| किन्तु उनके लेखन में पाण्डित्य बोझ की ज़रा भी कठिनाई नहीं महसूस होती है|

भावानुरुपता, भाषा की प्रमुख विशेषता है| वस्तु और परिस्थिति के अनुसार भाषा को मोड़ लेना द्विवेदी की निबन्धकला का विशिष्ट गुण है| वे जब अधिक भावुक होते है, तो उनके निबंधों की भाषा सहजोच्छल, तरंगायित शीतकालीन सरिता की भाँती प्रवाहपूर्ण और ह्रुदयहारिणी बन जाती है|

उनकी लेखन शैली और भाषा की सहजता, उनके सभी प्रकार के निबंधों में देखने को मिलता है| उनकी भाषा में तत्सम शब्दों के साथ ही साथ तद्भव, देशज

एवं विदेशी सभी प्रकार के शब्दों का प्रयोग हुआ है| बोलचाल की भाषा में मुहावरों का प्रयोग करके उन्होंने भाषा लालित्य का उद्घाटन किया है

आपके निबंधों की भाषा सरल, सरस और सहज होने के साथ ही तलस्पर्शी होती है| ऐसा लगता है कि भाषा स्वयं बोल रही है| कुछ निबंधों के शीर्षक को तो ऐसा संजोया गया है कि जिससे पाठक का मन सहज जिज्ञासु हो उठता है और वह इन शीर्षकों में निहित व्यंग्यार्थ को पहचानने के लिए विवश हो जाता है| ऐसे स्थलों पर भाषा मोहक और सुन्दर दीख पड़ती है| 'प्रयश्चित की घड़ी', 'घर जोड़ने की माया', 'भीष्म को क्षमा नहीं किया गया' आदि निबंध इसका उदाहरण है| आपके अधिकांश निबंधों के शीर्षक अपूर्ण एवं अस्पष्ट है, इस लिए ही पाठक अधिक जिज्ञासु हो जाता है| अस्पष्ट भाषिक शिल्पों का प्रयोग द्विवेदी की अपनी विशेषता है|

द्विवेदी के निबंधों में चिंतन और प्रतिभापूर्ण कल्पना का सुन्दर समन्वय है| "मैं सोचता जाता था, मेरा रथ आगे बढ़ता जा रहा था| आखिर समाजवाद इतना प्रिय और आकर्षक सिद्धांत क्यों हैं? साथ ही मेरे मन में सवाल उठा, पेटंट दवाईयां इतनी लोकप्रिय क्यों है? क्या इन दोनों में कोई समानता है? किसी अख़बार को खोलिए, उसके अधिकांश पन्ने दो ही प्रकार के संवादों से भरे मिलेंगे| कहीं पर समाजवाद के, कही पर पेटंट दवाईयों के|"[2]

द्विवेदी का शब्द भण्डार अत्यंत व्यापक है| उनकी स्पष्ट धारणा है कि जो भाषा, अधिक से अधिक विदेशी शब्दों को जितनी आसानी से ग्रहण कर सकती है, वह उतनी ही श्रेष्ठ है| अपनी इसी धारणा को 'हमारी साहित्यिक समस्याएँ' नामक कृति में स्पष्ट करते हुए लिखा है – "मुझे गर्व है कि आपने आज जिस भाषा को अपने लिए सामान्य भाषा के रूप में वर्णन किया है, उसने उर्दु के रूप में इतने विदेशी

[2] विचार और वितर्क, हज़ारी प्रसाद द्विवेदी, पृ : 141-142

शब्दों को हजम लिया है कि संसार की समस्त वेदेशी भाषाओँ को पाचनशक्ति की प्रतिद्धन्द्धिता में पीछे छोड़ गई है|"[3]

काव्यमय-भाषा का प्रयोग :-

द्विवेदी के उपन्यासों में भाषा का काव्यमय रूप सर्वत्र देखने को मिलते है| भाषा का, आलंकारिक रूप में प्रयोग द्विवेदी द्वारा अत्यंत शक्तिशाली ढंग से किया गया है| इनकी भाषा में उपमा, रूपक, मानवीकरण आदि अलंकारों का प्रोयोग भी हुआ है| उनकी भाषा गद्यकाव्य से अधिक निकट आती है| पुनर्नवा उपन्यास में अप्रस्तुत का प्रयोग कविता की ही भाँती हुआ है :-

उदा :- उनकी संपूर्ण देहलता किसी निपुण कवि द्वारा निबद्ध छंदोधाराकी ही भाँती हुआ है| (पुनर्नवा)[4]

द्विवेदी के निबंधों की भाषा भी काव्यमय है| उदाहरण केलिए 'अशीक के फूल' नामक निबन्ध में इस फूल का वर्णन द्विवेदी ने इसप्रकार की है - "मैं जब अशोक के लाल स्तबकों को देखता हूँ तो मुझे वह पुराना वातावरण प्रत्याक्ष दिखाई दे जाता है| राजघरानो में साधारणत: रानी ही अपने सनुपुर चरणों के आधात से इस रहस्यमय वृक्ष को पुष्पित किया करती थी| कोमल हाथों में अशोक - पतलोम का कोमलतर गुच्छ आया , अलक्तक से रंजित नूपुरमय चरणों के मृदु आघात से अशोक का पाद देश आहात हुआ - नीचे हलकी रुनझुन और ऊपर लाल फूलों का उल्लास|"[5]

[3] हमारी साहित्यिक समस्याएँ, हज़ारी प्रसाद द्विवेदी, पृ : 16

[4] पुनर्नवा, हज़ारी प्रसाद द्विवेदी, पृ : 9

[5] हज़ारी प्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली, खण्ड 9, पृ : 22-23

भावानुकूल भाषा :-

द्विवेदी ने प्रसंगानुकूल तथा भावानुकूल भाषा का प्रयोग करने में सफल निकले है| "बहुत देखा है बाबा, इस राजकुल में ऐसी पूजारिनें कई बार आ गई है| अरे भला, यह नई चिड़िया कहाँ से फँसा लाई मितिया| .....दो दिन में सिख जाओगी लली| न जाने कितनी आँखों पर नाचती फिरेगी|"[6]

वर्त्तमान समाज को भय तथा जिज्ञासा के साध देखनेवाले द्विवेदी, 'नकुल क्यों बढ़ते है ' नामक निबंध में पूछते है की "मनुष्य किस ओर बढ़ रहा है? पशुता की ओर या मनुष्यता की ओर? अस्त्र बढ़ाने की ओर या अस्त्र काटने की ओर?"[7]

साहित्यिक भाषा प्रयोग :-

आचार्य द्विवेदी की समीक्षा कृतियों की भाषा साहित्यिक हिंदी है| इसमें संस्कृत शब्दों की बहुलता है| सूर साहत्य की भाषा को उदहारण के रूप में ले सकते है| "ऊँचे वर्ग के लोग अपनी झूठी शान में मत रहते थे|"[8] "स्वयं प्रेम की महिमा के कायल थे|"[9]

'रे कवि, एक बार सम्हाल' नामक अपने निबंध में द्विवेदी लिखते हैं - " केवल सिसकते शिशु ही यहाँ दिखते, बिलखती जननीयां मिलती, केवल दमन का चीत्कार, केवा हाय-हाय पुकार|"[10] इसमें समाज की दर्दनाक स्थिति का का वर्णन हैं|

---

[6] बाण भट्ट की आत्मकाथा, हज़ारी प्रसाद द्विवेदी, पृ : 32

[7] हज़ारी प्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली, खण्ड 9, पृ : 107

[8] सूर साहित्य, हज़ारी प्रसाद द्विवेदी, पृ : 74

[9] सूर साहित्य, हज़ारी प्रसाद द्विवेदी, पृ : 133

[10] हज़ारी प्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली, खण्ड 9, पृ : 234

चित्र भाषा और मूर्तता का उपयोग

उपन्यासों में द्विवेदी की भाषा वर्णनात्मक हैं| संदर्भगत विचारों तथा भावों का संप्रेषण करते-करते द्विवेदी की भाषा दृश्य चित्रों के समान सामने आती है| वह वसुओं को विभिन्न कोणों से, विविध सादृश्य विधानों से और प्रसंगानुकूल दृष्टियों से देखती है| वस्तु वर्णन को प्रधानता देने के कारण उन्होंने अपने व्यक्तित्व से भाषा को अलग कर लिया है| "उस समय आकाश, वृद्ध कपोत के पक्ष के समान धूम्र हो गया था| चंद्रमा, कटी हुई पतंग की भाँती अस्तशिखर पर ढल चूका था| तरुण अरुण की पीलाभ रश्मियाँ स्वर्ण शल्का की बनी झाड़ू के समान पूर्व गगन के नक्षत्रों को झाड रही थी| महारुद्र के पिनाक की भाँती धनुराशि, आकाश के पश्चिम मंडलार्थ में प्रत्याशित हो चुकी थी और क्षीण भूयिष्ठा रजनी, सन्यास लेने के लिए एक-एक करके अपने नक्षत्रालंकारों को खोल रही थी| चण्डीमण्डप तुहिनसिक्त हो गया था आर सामने के मैदान की दुर्वाबलियाँ अलसशिथिल भाव से पड़ी दीख रही थी|"[11] इसमें भाषा के माध्यम से दृश्य ही सामने रह गया है|

उदा:- "उसका रंग अवश्य शेफालिका के कुसुम नाल के रंग से मिलता था, परंतु उसकी सबसे बड़ी चारुता-संपत्ति उसकी आँखे और अंगुलियाँ ही थी| अँगुलियों को मैं महत्वपूर्ण सौन्दर्योपादान समझता हूँ| नटी की प्रणामांजली और पताक-मुद्राओं को सफल बनाने में पतली-छरहरी अंगुलियाँ अद्भुत प्रभाव डालती है|"[12]

'आत्मादान का संदेशवाहक - वसंत ' द्विवेदी लिखते हैं - "वसंत के आगमन से सारा संसार उल्लसित हो उठता हैं| पेड़ - पौधों के अंतरतर का व्याकुल आनंद

[11] बाण भट्ट की आत्मकथा, हज़ारी प्रसाद द्विवेदी, पृ : 53

[12] बाण भट्ट की आत्मकथा, हज़ारी प्रसाद द्विवेदी, पृ : 27

किसलयों और पुष्पों के रूप में फट पड़ता हैं| जड़ धरित्री भी अद्भुद श्रृंगार - सज्जा में आनंद - पुलकित जान पड़ती है|"[13]

कल्पना का समावेश

वास्तविकता के साथ ही साथ कल्पना का समावेश द्विवेदी की रचनाओं की प्रमुख विशेषता है | उदा:- भट्टिनी ही थी – आगुल्प, आच्छादित, नील आवरण में से उनका मनोहर मुख सौगुणा रमणीय दिखाई दे रहा था, मानो ज्योत्सना-रूप धवल मंदाकिनी धारा में बहते हुए शैवाल-जाल में उलझा हुआ प्रफुल्ल कमल हो, क्षीर सागर में संतरण करती हुई नीलवसना पद्मा हो, कैलास पर्वत पर खिली हुई सपुष्पा के दमनकयाष्टि हो, नील मेघ-मंडल में झलकनेवाली स्थिर सौदामिनी हो|"[14]

लहालोट हो गई, टिटकारी दी, भहरा गई, टोह-टोहकर-इस प्रकार के प्रसंगों से उनकी रचनाओं में तद्भवता आ गया है|

वसंतागमन से पृथ्वी में जी बदलाव आ जाता है, उसी की कल्पना द्विवेदी इस प्रकार करते हैं -"कैसे कहूँ की धरती के इस साज-सिंगार के अंतराल में किसी प्रकार का मानसिक कम्पनं नहीं है, महामाया क्या केवल तथाकथित चेतन प्राणी को ही अपने मोहक मन्त्र से आवेक - चंचल कर रही है|"[15]

मिश्रित भाषा का प्रयोग :-

उन्होंने अपने उपन्यासों में मिश्रित भाषा का प्रयोग भी किया है| बाण भट्ट की आत्मकथा में बाण भट्ट निपुणिका से कहती है कि निउणिया, कल सौभाग्य से

[13] हज़ारी प्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली, खण्ड 9, पृ : 52-53

[14] बाण भट्ट की आत्मकथा, हज़ारी प्रसाद द्विवेदी, पृ : 42

[15] हज़ारी प्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली, खण्ड 9, पृ : 53

मुझसे तेरी मुलाकात हो गई| अनेक ऐसे-ऐसे मिश्र वाक्यों का प्रयोग भी अपनी रचनाओं में द्विवेदी ने की हैं|

मिश्र वाक्यों का प्रयोग :-

अनेक ऐसे छोटे-छोटे तथा मिश्र वाक्यों का प्रयोग भी अपने उपन्यासों में द्विवेदी ने की है|

उदा – बेटा रैक्व!

माँ!

क्या सोच रहे हो बेटा? यह आदमी कैसा लगा?

मामा के बारे में पूछती हो माँ?

हाँ, यही मामा, सबका मामा!

अत्भुत है माँ! मैं कुछ ऐसा कर सकता तो

धन्य होता माँ![16]

प्राचीन बोलचाल की भाषा :-

द्विवेदी ने बहुत से ऐसे शब्द गढ़ें है जिनका स्वरूप तो आज का है, लेकिन उनका उत्स प्राचीन बोलचाल की भाषा है| ऐसे शब्दों में तत्कालीन सामान्य जीवन चित्र स्पष्ट दिखाई देता है| निउणिया (निपुणिका), उजुआ (ऋजुका), मित्तया (मितव) आदि|

[16] अनामदास का पोथा, हज़ारी प्रसाद द्विवेदी, पृ : 86

साधारण बोलचाल की भाषा :-

फक्कड़, छपरा, सुमिरन आदि साधारण बोलचाल की भाषा का प्रयोग उनके निबंधों में सर्वत्र विद्यमान हैं|

अनुप्रास ध्वनियों का प्रयोग:-

लोकांतर, कालांतर, दिगंतर आदि अनुप्रास-ध्वनियों का प्रयोग उनकी भाषा की विशेषता है|

ध्वनि की आवृत्ति से अर्थ की सघनता निर्मित हो रही है|

उदा:- देवरात ठगे-, खोये से, हारे से, स्तबध!

अपने में संपूर्ण दिखाई देनेवाले वाक्य कहीं और पूरे होते है –

उदा:- "लौटना कठिन है| लौट नहीं सकते| 'लौटना' क्रिया ही गलत है| कोई नहीं लौटता| नहीं लौटा जाता| लौटना निरर्थक पद है|"[17]

उनके उपन्यासों में प्रयुक्त भाषा के विशेषण भी अत्यंत अर्थ प्रगत्भ और प्रसंगप्रवण है| उदा – प्रानाधिका, चौर्य-लब्ध, अवधेय आदि|

अलंकारों का प्रयोग :-

रचनाओं के सौन्दर्य बढ़ाने के लिए अलंकारों का प्रयोग द्विवेदी ने किया है|

उदा:- 1. खरतर असिधारा स्रोतस्विनी, स्फुर्जित दीप्ति- वहिन में प्रयत्न-दस्यु स्वयं पतंगामान हो रहे है| (रूपक)

2. वास्तव में धरती के हृदय की रस-राशी थी, जो प्रचण्ड ताप के भीतर भी अपनी शीतलता की घोषणा कर रही थी| (अपहुति)

[17] चारुचन्द्र लेख, पृ :

3. क्षण भर के लिए लाल चीवर से लिपटे विरतिवज्र को देखकर मेरे मन में धूर्जटी की नयनाग्नीशिखा में वलयित मदन देवता का स्मरण हो आया| (स्मरण)

4. मानो, विधाता ने शंख से खोदकर, सुधा चूर्ण से धोकर रजत-राज में पोंछकर, कुटज, कुंत और सिद्धवार पुष्पों की धवल कान्ति से सजाकर ही उसका निर्माण किया था| (उत्प्रेक्षा)

भाषा में रसो का प्रयोग :-

द्विवेदी की भाषा की और एक विशेषता 'रसात्मकता' है| करुण, वात्सल्य, भयानक आदि रसों का समावेश उपन्यासों में देखा जा सकता है| चारुचन्द्रलेख के प्रस्तुत प्रसंग में भयानक रस का उल्लेख मिलता है| "इसी समय उसे पीछे से निकट आती हुई छायामूर्ति देखी, जिसके पीछे-पीछे गिद्धों और सियारों की सेना चली आ रही थी और कपालवाहिनी योगिनियों के एक विशाल यूथ उन्मत्त की भांति झूमता दौड़ा आ रहा | सबके आगे महाविद्या का सर्वाधिक भीषण रूप छिन्नमस्ता थी| चंद्रलेखा भय से काँप उठी| उस भयंकर नग्न शरीर के मध्यदेश को घेरकर एक पतली-सी कनक मेखला विराजमान थी छिन्नमस्ता के एक हाथ में कराल कृपाण था और दूसरे में अपना ही मनोहर मुख उन्हीं के रुंण् से उच्छलित रक्तधारा का, मस्ती में आस्वादन कर रहा था| उनकी दोनों सखियाँ – वर्णिनी और डाकिनी-छककर रक्तपान करती हुई भागी आ रही थी|वायु की गति तेज मालूम हुई, बिजली की कड़क और तीव्र होकर दिग्दिगन्त को चटकाने लगी, मेघ-पुंज और भी काला हो उठा|"[18]

द्विवेदी के उपन्यासों की भाषा प्राचीन भारतीय साहित्य के प्रयुक्त सभी उपयोगी तथ्यों को आत्मसात करती हुई पूर्ववर्ती साहित्य की अधुनातन व्याख्याएँ

[18] चारुचंद्रलेख, हज़ारी प्रसाद द्विवेदी, पृ : 101-102

प्रस्तुत करने में सक्षम सिद्ध हुई है| उपनिषदों, पुराणों, वेदों तथा महाकाव्यों से प्रसंगानुसार तथ्यों को ग्रहण करके, उन्हें अपने भाषा शिल्प के कौशल द्वारा 'निजत्व' प्रदान करने में अद्वितीय आचार्यजी ने कहीं-कहीं तो श्लोकों का पुनरुत्पादन तक किया है| कालिदास के मालविकाग्निमित्र के एक श्लोक को द्विवेदी ने इस प्रकार प्रस्तुत किया है – "उसका बाँया हाथ कटी देश पर व्यस्त था, कंकण पर सरक आया था, दाहिना हाथ शिथिल श्यामलता के समान झूल पड़ा था, उसकी कमनीय देहलता नृत्य भंग से ज़रा झुक गई थी, मुखमंडल श्रमबिन्दुओं से पूर्ण था|"[19]

"द्विवेदी ने अपनी भाषा को शास्त्रीयता के पिंजड़े से निकालकर, औपन्यासिक क्षितिज में पंख खोलकर उड़ा दिया है|" [20] उनकी भाषा में ताजगी और जीवन्तता है| अत्यंत सहज भाव से कही हुई बात गहराई तक चोट करनेवाली होती है| अनामदास का पोथा नामक उपन्यास में अंग्रेजी जानने और समझनेवाले की चतुरता पर व्यंग करते हुए उन्होंने लिखा – "जो अंग्रेज़ी जानता है और झमाझम उसको बोल लेता है, वह चतुर माना जाता है| अंग्रेज़ी समझकर मान लिए जाते है, तो इसमें बुराई कुछ नहीं है| जानश्रुति अंग्रेज़ी तो नहीं जानते होंगे, परंतु हंसों की बोली वे समझते थे| आदमियों में जैसा अंग्रेज़, चिड़िया में वैसा हंस|"[21]

द्विवेदी की भाषा, प्राचीन भारतीय साहित्य के सारे उपयोगी तत्वों को आत्मसात करती है| वह उसके परवर्ती साहित्य की जीवन्तता को अपने में धारण करती है| इसमें पुराकालीन, मध्यकालीन और अर्वाचीन, सभी कालो के काव्य-भाषिक वैशिष्ट्य परिलक्षित होते है| वह अपने पाठकों को एक सर्वथा अननुभूत रसमयता का आस्वादन कराती है| इस रसमयता का आधार भारतीय साहित्य में

[19] बाण भट्ट की आत्मकथा, हज़ारी प्रसाद द्विवेदी, पृ : 9-10

[20] हज़ारी प्रसाद द्विवेदी, by विश्वनाथ प्रसाद तिवारी, पृ : 186

[21] अनामदास का पोथा, हज़ारी प्रसाद द्विवेदी, पृ : 20

चली आ रही महान ग्रन्थों से दाय ग्रहण करने की प्रवृत्ति भी है| द्विवेदी ने भी अपनी भाषा को प्रभावोत्पादक बनाने के लिए पूर्ववर्ती साहित्य से काफी कुछ ग्रहण किया है| उन्होंने संस्कृत के कई श्लोकों का पुनरुत्पादन किया है|

भाषा में सजीवता लाने की दृष्टि से द्विवेदी ने अपनी रचनाओं में अनेक हिंदीतर शब्दों का प्रयोग किया है|

संस्कृत शब्द:- आध्यात्मिकता की बोझ के कारण उनकी रचनाएँ संस्कृत शब्दों का भण्डार हैं| उदा: प्रेम, विचित्र, अहंकार, क्षमा, स्वर्ग, जगत, जीवन, प्राण, सुन्दर, क्षोभ, मर्यादा-पुरुषोत्तम, वृक्ष, ताण्डव, दाँव, संस्कृति, मृत्यु, अनादिकाल, दासी, निःश्वास, देवता, मुनि, ज्योतिष, धरा, धर्म, व्रत, पूजा, आचार्य, जीजीविषा, सत्य, वैरागी, श्रद्धा, अंजलि, विघ्न, मूर्ति, अवकुंठन, मनीषी|

अरबी-फ़ारसी शब्दों का प्रयोग:- दार्शनिकता की बोझ के कारण उनकी रचनाओं में अरबी एवं फ़ारसी शब्द बहुत कम ही पाई जाती है| मुसलमान, सल्तनत, बादशाह, दुनिया, जुम्मा, जल्दी, गाडी, जिन्दगी, ईमान, पड़ोसी, लकीर, करीब, जुलूस, शामिल, साफ़, गरीब आदि अरबी तथा बेकार, कोशिश, शर्म, ज़िन्दगी आदि फारसी शब्दों का प्रयोग स्वाभाविक रूप से इसमें आ गया है|

इसी प्रकार भाषा को कोमल और मृदु बनाने के प्रयास में **बंगला भाषा** के लघु काव्य-खण्डों का भी प्रयोग किया गया है|

उदा:- 'तोहर रूप देख नाहि, शुल्य पुरुष, शुल्य देहि'

'जहाँ घटता हो, सब सत्य न हो' कल्पना

'एक भद्रलोक आपनार दर्शन जन्य ऐसे छेन' (अशोक के फूल)

तद्भव और देशज शब्दों का प्रयोग :-

अपनी आलोचनाओं में द्विवेदी कहीं-कहीं तद्भव और देशज शब्दों के प्रयोग से भाषा को आकर्षक एवं सहज बना दिया है| सूरदास और नन्ददास की गोपियों की तुलना करते हुए आपने लिखा – "नन्ददास की गोपियाँ प्रेम में बावरी है, तर्क में नहीं, उपालम्भ करने में भी नहीं, परन्तु सूर की गोपियाँ सब तरह से भौरी है|"[22]

सम्मान-जनक शब्दों का प्रयोग :-

द्विवेदी के उपन्यासों में प्राचीन भारतीय जीवन के विभिन्न पक्षों का चित्रण तत्कालीन परिवेश के तथ्यों के माध्यम से हुआ है| इस लिए उनमें अनेक तत्कालीन सम्मान-जनक शब्दों का प्रयोग हुआ है| जैसे – अत्रभवान, तत्रभवान, भद्र आदि | इन उपन्यासों में एक ही व्यक्ति के सम्मान व्यंजक शब्दों का समूह भी पाई जाती है| जैसे – विषमसमर विजयी, वाह्लीक विमर्दन, देवपुत्र तुंवर मिलिन्द|

तत्कालीन सही समाज में प्रचलित गालियाँ भी द्विवेदी के उपन्यासों में विद्यामान है| जैसे – लम्पट, दम्भी, डरपोक, पाखण्डी, अभागा, मूर्ख, झूठा आदि|

अंग्रेज़ी भाषा के प्रचलित शब्दों का प्रयोग द्विवेदी ने अपने भावों को प्रकाशान के लिए किया है| रिपोर्ट, डिक्शनरी, मशीन, रिमार्क, स्टेज, फिसिक्स, पिकनिक आदि इसका उदाहरण हैं| महामानव समुद्र, आभरण धरिणी, अशोक मंजरी अदि समासयुक्त शब्दों का प्रयोग द्विवेदी की अपनी विशेषता है|

[22] सूर साहित्य, हज़ारी प्रसाद द्विवेदी, पृ : 136

मुहावरे तथा लोकोक्तियों का प्रयोग:- मुहावरे तथा लोकोक्तियों का प्रयोग संदर्भ के अनुकूल करने में द्विवेदी सफल निकले है| नयनतारा, काजर की कोठरी, मूँह ताकना, आँख दिखाना आदि मुहावरों तथा लोकोक्तियों का प्रयोग उल्लेखनीय है

आचार्य द्विवेदी अनेक भाषाओं के विद्वान है| किन्तु उनकी विद्वत्ता, उनके साहित्य में बोझ बनकर नहीं आई है| उनकी भाषा में ओजस्विता, जीवन्तता और भास्वरता की त्रिवेणी प्रवाहित हो रही है| प्रसिद्ध भाषा वैज्ञानिक भोलानाथ तिवारी के अनुसार आचार्य द्विवेदी अपनी भाषा से जो चाहा है, कहला लिया है, बन पड़ा तो सीधे, नहीं तो दरेरा देकर, धक्का मारकर|

द्विवेदी की भाषा में एक और कथन की भंगिमा का नित्य नवोन्मेषी पक्ष मिलता है, दूसरी और भाषा का सहज, सरल और बोलचाली स्वरूप भी है| उसमें अशोक के फूल की मादकता है, देवदारु की आध्यात्मिकता है, कुटज की विरक्ति है| द्विवेदी, वाणी के उपासक है| वे भाषा को महामाया का परिष्कृत रूप मानते हैं| द्विवेदी की भाषा, भारतीय साहित्य के आदिकाल से लेकर, समकालीन साहित्यकारों का भी वैशिष्ट्य को लिया हुआ है, फिर भी उसकी अपनी स्वतंत्र पहचान है|

शैली

किसी भी साहित्यिक रचना की शैली, उसकी कथावस्तु एवं वास्तु विन्यास पर आधारित रहता है| बाणभट्ट की आत्मकथा, अपनी समस्त औपन्यासिक संरचना और भंगिमा में कथा-कृति होते हुए भी महाकाव्यत्व की गरिमा से पूर्ण है| इसमें द्विवेदी ने प्राचीन कवि बाण के बिखरे जीवन सूत्रो को बड़ी कलात्मकता से गूँथकर, एक ऐसी कथा-भूमि निर्मित की है, जो जीवन-सत्यों से रसमय साक्षात्कार कराती है|

शैलीगत दृष्टि से देखे तो 'बाणभट्ट की आत्मकथा' की शैली अभिनंदीय है| यह कृति जितनी बार पढ़ी जाय, उतनी ही शिल्पविषयक उपलब्धियों के द्वारा खुलते

जाते है| इस उपन्यास का प्रस्तुतीकरण हिंदी साहित्य में एक अभिनव प्रयोग है| इसका कथामुख और उपसंहार अभूतपूर्ण है| इसमें लेखक ने संस्कृत के कथा **आख्यायिका शैली** के अनुरूपता लाने का प्रयास किया है| प्रारंभ के कथामुख और अंत का उपसंहार, वंदना के द्वारा कथारंभ, उच्छ्वासों में उसका विभाजन तथा लंबे अलंकृत वर्णन आदि को पढ़कर, यह सहज ही कहा जा सकता है कि लेखक ने उपर्युक्त पुराने ढाँचे को अपने सामने रखा था, किन्तु यह अनुरूपता अधिकांशतः स्थूल और सूक्ष्म है| इस कृति का रूप शिल्प अत्यंत आकर्षणीय है|

आत्मकथात्मक शैली में उन्होंने प्रस्तुत उपन्यास का आरंभ स प्रकार की है – " यद्यपि बाणभट्ट नाम से ही मेरी प्रसिद्धि है, पर यह मेरा बास्तविक नाम नहीं है| इस नाम का इतिहास ग न जानते तो अच्छा था....."[23]

'अनामदास का पोथा' नामक उपन्यास की शैली भी गंभीर है| प्रस्तुत उपन्यास तत्वचिंतनपरक भाषा की अपेक्षा के कारण कवित्वमय नहीं बन पाया है| वाक्य, छोटे-छोटे तथा बोधगम्य है| इस उपन्यास में वर्णात्मक, भावात्मक, विचारात्मक तथा **दार्शनिक शैली** का प्रयोग हुआ है|

'चारुचन्द्रलेख' में वर्णनात्मक, भावात्मक, आत्मपरक तथा संवादपरक शैली का सुन्दर संगम है| इसमें अलंकार, लोकोक्ति, मुहावरों का सहज प्रयोग देखा जा सकता है| 'पुनर्नवा' में **काव्यात्मक शैली** का प्रयोग हुआ है| इसमें भावों की प्रमुखता के कारण हर वाक्य में काव्यात्मकता विद्यमान है|

"हिमालय के पाद देश में, सरस्वती नहीं की उद्गम भूमि में यह व्यासतीर्थ है| आज श्रावण पूर्णिमा है| सारा नभोमण्डल नील पयोधरों से अवगुंठित है| मयूर,

[23] हज़ारी प्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली खण्ड 1, पृ : 21

मत्त से नाच रहे है| घनघोर वर्षा होनिवाली है|"[24] इस प्रकार की काव्यमय शैली से उनकी रचनाएँ पाठकों को आकर्षित करते हैं|

उनके चारों उपन्यासों का पात्र ऐतिहासिक एवं सच्चरित्र है| विषय की गहनता, पात्रों का चयन, घटना एवं वातावरण, भाषा शैली आदि महाकाव्य के सारे के सारे तत्व उनके उपन्यासों में विद्यमान है| इसलिए ही उनके उपन्यास महाकाव्य की कोटि में रखा जा सकता है|

आचार्य हज़ारी प्रसाद द्विवेदी के निबंध, कहानी, समीक्षा आदि सभी रचनाओं में भिन्न-भिन्न शैली का प्रयोग देखने को मिलता है| इसलिए ही भाषाशास्त्री डॉ. भोलानाथ तिवारी ने द्विवेदी को 'अतभुत शैलीकार' कहते हुए कहा है कि हिंदी ने गद्य के क्षेत्र में अभी तक इतना बड़ा शैलीकार कदाचित पैदा नहीं किया| उनका विस्तृत लेखन इस बात का साक्षी है कि वे अन्य साहित्य सर्जकों से कितने आगे है![25]

द्विवेदी के उपन्यासों में **संवादात्मक शैली** देखने को मिलते हैं| अनामदास का पोथा नामक उपन्यास में माताजी और रैक्क के बीच का संवाद इसका उदहारण है –

रैक्क बेटा,

हाँ माँ

अकेले आश्रम जा सकोगे?

जा सकूँगा माँ!

तो कल प्रातः चले जाना|[26]

[24] हज़ारी प्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली खण्ड 1, पृ : 501

[25] आचार्य हज़ारी प्रसाद द्विवेदी, भोलानाथ तिवारी, पृ : 172

[26] अनामदास का पोथा, हज़ारी प्रसाद द्विवेदी, पृ : 32

द्विवेदी के प्रमुख ऐतिहासिक उपन्यास 'बाणभट्ट की आत्मकथा' को पढने से हमें ऐसा प्रतीत होता है कि उसमें **पूर्वदीत्ति शैली** का प्रयोग उन्होंने किया है| उपन्यास के प्रारंभ में बाण स्वयं कहते हैं – "मेरी लज्जा का प्रधान कारण यह है कि मेरा जन्म जिस प्रख्यात वात्स्यायन वंश में हुआ है, उसके धवल कीर्ति-पट पर यह कहानी एक कलंक | हमारे पूर्वजों के घर यज्ञ-धूम से धूमायित रहते थे| परंतु यह सब मेरी सुनी हुई कहानी है|"[27] इससे बाण के पूर्व चरित्र की पहचान हमें मिलते हैं|

निबंधों की शैली

आचार्य द्विवेदी के निबंधों के कल्पना की स्वच्छंद उड़ान और संगठित भाव-विन्यास के साथ ही शब्दों की व्युत्पत्ति की चर्चा तथा उनकी व्याकरणिक संघटना की व्याख्या की गई है तथा समानान्तर एवं पर्यायवाची शब्दों के अर्थ भेद तथा उनके सादृश्य को अत्यंत सरल ढंग से स्पष्ट किया गया है| उनके लगभग सभी निबंध काव्यात्मक प्रतिभा का पूर्ण परिचय देते हैं| उनके ललित निबंधों में तो काव्यात्मकता ही प्राण बनकर छा गई है|

द्विवेदी के कुछ निबंध ऐसा है, जिसमें उन्होंने **आत्मकथात्मक शैली** का प्रयोग किया है| 'मेरी ज़िंदगी का नया मोड़ - नया नया जन्म' नामक निबंध का प्रारंभ इसप्रकार है - " ज़िंदगी के पहले मोड़ के बारे में क्या कहूँ. ज़िंदजी में मोड़ आये ही नहीं , यह भी कैसे कहूँ! आए हैं कीच नए अनुभव, नए मोह..."[28]

आध्यात्मिक तत्वों को ज़ोर से पकड़ते हुए द्विवेदी ने कुछ निबंधों की रचना की हैं| इसलिए ही **पण्डित्यापूर्ण शैली** का प्रयोग इसमें अनिवार्य बन गया है|

[27] बाणभट्ट की आत्मकथा, हज़ारी प्रसाद द्विवेदी, पृ : 3
[28] हज़ारी प्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली, खण्ड 9, पृ : 473

'भारतीय साहित्य का मेरुदंडु ' में वे लिखते है-"आत्मा, विज्ञान, मन, प्राण, पृथ्वी, जल, वायु, आकाश, तेजस, काम, अकाम, धर्म, अधर्म आदि सबकुछ लेकर निर्गत होता है|"[29]

समाज की दुष्ट जनता की ओर इशारा करते हुये अपने एक निबंध में द्विवेदी लिखते हैं-"नागनियां विषाक्त निश्वास से वातावरण को क्षुब्ध कर रही हैं|" इसप्रकार की **काव्यात्मक शैली** उनके अधिकाधिक निबंधों में पाई जाती हैं|

द्विवेदी ने **विवरणात्मक शैली** का प्रयोग भी अपने निबंधों में किया हैं | 'आत्मादान का सन्देशवाहक वसंत ' में वसन्तकाल का वर्णन उन्होंने इसप्रकार की हैं - "कभी दोहद के रूप में , कभी मदन देवता की पूजा के रूप में, कभी आम्र तरु ओर माधवी लता के विवाह के रूप में समूचा वसंतकाल नाच ,गान और काव्यालाप से मुखर हो उठता था|"[30]

आपकी भाषा 'काव्य के वाहन' के रूप में तो है ही, साथ ही उसके सरल हृदयग्राही तथा सहज स्वरूप का जीवन्त उदहारण भी है| उनकी भाषा सर्वत्र प्रवाहमान है| आचार्य द्विवेदी की रचनाओं को गहराई से अध्ययन करते समय हमें ज्ञात होते हैं कि उनकी, भाषा पर पूर्ण अधिकार है| ईश्वर प्रदत्त भाषा को उन्होंने मानवीय धरातल पर खड़ा करते हुए, अलंकृत करके बहुत मनमोहक बना दिया| वैविध्यपूर्ण भाषा एवं शैली का प्रयोग उनकी रचनाओं को दूसरी रचनाकारों से अलग कर देता है|

.....ooo.....

[29] हज़ारी प्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली, खण्ड 9, पृ : 488
[30] हज़ारी प्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली, खण्ड 9, पृ : 52